5 जनजातियाँ, खानाबदोश और एक जगह बसे हुए समुदाय

अध्याय 2, 3 और 4 में आपने देखा कि किस प्रकार राज्यों का उत्थान और पतन हुआ। इस उठापटक के बीच ही कलाओं, दस्तकारियों और उत्पादक गतिविधियों की नयी किस्में शहरों और गाँवों में फल-फूल रही थीं। एक लंबे अंतराल में कई महत्त्वपूर्ण राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हुए। लेकिन सामाजिक परिवर्तन हर जगह एक समान नहीं थे, क्योंकि अलग-अलग किस्म के समाज अलग-अलग तरीकों से विकसित हुए। ऐसा कैसे और क्यों हुआ, यह समझना महत्त्वपूर्ण है।

चित्र 1
जनजातीय नृत्य: संताल चित्र खर्रा

इस उपमहाद्वीप के बड़े हिस्से में समाज, वर्ण के नियमानुसार पहले से ही विभाजित था। ब्राह्मणों द्वारा सुझाए गए ये नियम, बड़े-बड़े राज्यों के राजाओं द्वारा स्वीकार किए गए थे। इससे ऊँच और नीच तथा अमीर और गरीब के बीच का फ़ासला बढ़ा। दिल्ली के सुलतानों और मुग़लों के काल में श्रेणीबद्ध समाज ज़्यादा जटिल हो गया।

बड़े शहरों से परे – जनजातीय समाज

अलबत्ता, दूसरे तरह के समाज भी उस समय मौज़ूद थे। उपमहाद्वीप के कई समाज ब्राह्मणों द्वारा सुझाए गए सामाजिक नियमों और कर्मकांडों को नहीं मानते थे और न ही वे कई असमान वर्गों में विभाजित थे। अकसर ऐसे समाजों को जनजातियाँ कहा जाता रहा है।

प्रत्येक जनजाति के सदस्य नातेदारी के बंधन से जुड़े होते थे। कई जनजातियाँ खेती से अपना जीविकोपार्जन करती थीं। कुछ दूसरी जनजातियों के लोग शिकारी, संग्राहक या

© NCERT not to be republished

पशुपालक थे। प्रायः वे अपने निवासस्थान के प्राकृतिक संसाधनों का पूरा-पूरा इस्तेमाल करने के लिए इन गतिविधियों का मिला-जुला रूप अपनाते थे। कुछ जनजातियाँ खानाबदोश थीं और वे एक जगह से दूसरी जगह घूमती रहती थीं। जनजातीय समूह, संयुक्त रूप से भूमि और चरागाहों पर नियंत्रण रखते थे और अपने खुद के बनाए नियमों के आधार पर परिवारों के बीच इनका बँटवारा करते थे।

इस उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों में कई बड़ी जनजातियाँ फली-फूलीं। सामान्यतः ये जंगलों, पहाड़ों, रेगिस्तानों और दूसरी दुर्गम जगहों पर निवास करती थीं। कभी-कभी जाति विभाजन पर आधारित अधिक शक्तिशाली समाजों के साथ उनका टकराव होता था। कई मायनों में इन जनजातियों ने अपनी आज़ादी को बरकरार रखा और अपनी अलहदा संस्कृति को बचाया।

लेकिन जाति-आधारित और जनजातीय समाज दोनों अपनी विविध किस्म की ज़रूरतों के लिए एक-दूसरे पर निर्भर भी रहे। टकराव और निर्भरता के इस संबंध ने दोनों तरह के समाजों को धीरे-धीरे बदलने का काम भी किया।

?

उपमहाद्वीप का एक भौतिक मानचित्र लेकर वे इलाके बताइए जहाँ जनजातीय लोग रहते रहे होंगे।

जनजातीय लोग कौन थे?

समकालीन इतिहासकारों और मुसाफ़िरों ने जनजातियों के बारे में बहुत कम जानकारी दी है। कुछ अपवादों को छोड़ दें, तो जनजातीय लोग भी लिखित दस्तावेज़ नहीं रखते थे। लेकिन समृद्ध रीति-रिवाजों और वाचिक/मौखिक परंपराओं का वे संरक्षण करते थे। ये परंपराएँ हर नयी पीढ़ी को विरासत में मिलती थीं। आज के इतिहासकार जनजातियों का इतिहास लिखने के लिए इन वाचिक परंपराओं को इस्तेमाल करने लगे हैं।

जनजातीय लोग भारत के लगभग हर क्षेत्र में पाए जाते थे। किसी भी एक जनजाति का इलाका और प्रभाव समय के साथ-साथ बदलता रहता था। कुछ शक्तिशाली जनजातियों का बड़े इलाकों पर नियंत्रण था। पंजाब में खोखर जनजाति तेरहवीं और चौदहवीं सदी के दौरान बहुत प्रभावशाली थी। यहाँ बाद में गक्खर लोग ज़्यादा महत्त्वपूर्ण हो गए। उनके मुखिया, कमाल खान गक्खर को बादशाह अकबर ने मनसबदार बनाया था। मुल्तान और सिंध में मुग़लों द्वारा अधीन कर लिए जाने से पहले लंगाह और अरघुन लोगों का प्रभुत्व अत्यंत विस्तृत क्षेत्र पर था। उत्तर-पश्चिम में एक और विशाल

© NCERT not to be republished

मानचित्र 1
प्रमुख भारतीय जनजातियों के क्षेत्र

एवं शक्तिशाली जनजाति थी– बलोच। ये लोग अलग-अलग मुखियों वाले कई छोटे-छोटे **कुलों** में बँटे हुए थे। पश्चिमी हिमालय में गडड्री गड़रियों की जनजाति रहती थी। उपमहाद्वीप के सुदूर उत्तर-पूर्वी भाग पर भी नागा, अहोम और कई दूसरी जनजातियों का पूरी तरह प्रभुत्व था।

मौज़ूदा बिहार और झारखंड के कई इलाकों में बारहवीं सदी तक चेर सरदारशाहियों का उदय हो चुका था। बादशाह अकबर के प्रसिद्ध सेनापति राजा मान सिंह ने 1591 में चेर लोगों पर हमला किया और उन्हें परास्त किया। उन्हें लूट कर अच्छा-खासा माल इकट्ठा किया गया, लेकिन वे पूरी तरह अधीन नहीं बनाए गए। औरंगज़ेब के समय में मुग़ल सेनाओं ने चेर लोगों के कई किलों पर कब्ज़ा किया और इस जनजाति को अपना अधीनस्थ बना लिया। इस क्षेत्र में रहने वाली महत्त्वपूर्ण जनजातियों में मुंडा और संताल थे, यद्यपि ये उड़ीसा और बंगाल में भी रहते थे।

कुल
परिवारों या घरों के एक ऐसे समूह को कुल कहते हैं जो एक ही पूर्वज की संतान होने का दावा करते हैं। जनजातीय संगठन प्रायः नातेदारी या कुल संबंधी निष्ठा पर आधारित होते हैं।

© NCERT not to be republished

चित्र 2 रात में भील लोग हिरन का शिकार कर रहे हैं।

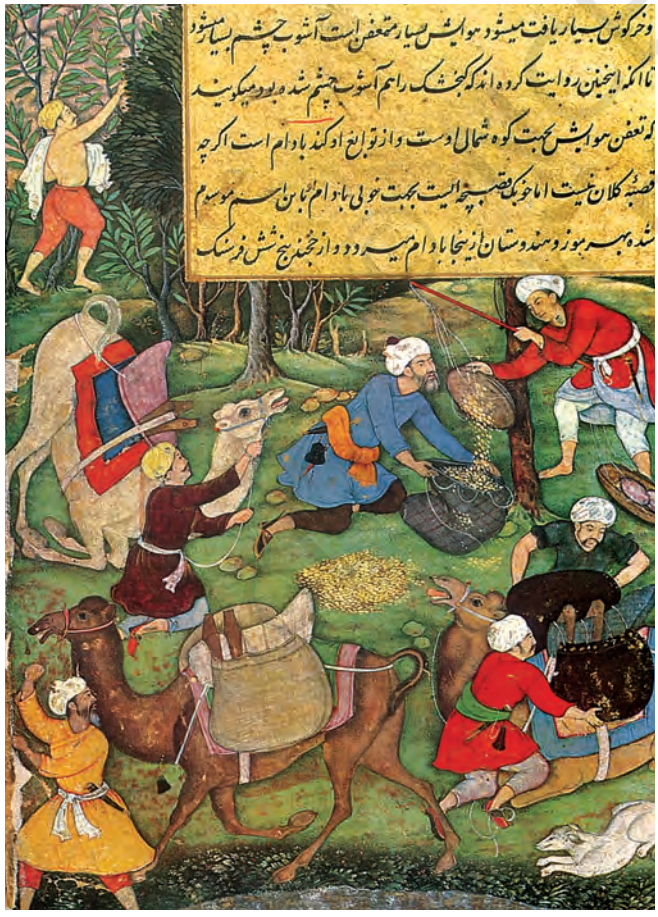

कर्नाटक और महाराष्ट्र की पहाड़ियाँ– कोली, बेराद तथा कई दूसरी जनजातियों के निवासस्थान थे। कोली लोग गुजरात के कई इलाकों में भी रहते थे। कुछ और दक्षिण में कोरागा, वेतर, मारवार और दूसरी जनजातियों की विशाल आबादी थी।

भीलों की बड़ी जनजाति पश्चिमी और मध्य भारत में फैली हुई थी। सोलहवीं सदी का अंत आते-आते उनमें से कई एक जगह बसे हुए खेतिहर और यहाँ तक कि ज़मींदार बन चुके थे। तब भी भीलों के कई कुल शिकारी-संग्राहक बने रहे। मौजूदा छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश में गोंड लोग बड़ी तादाद में फैले हुए थे।

खानाबदोश और घुमंतू लोग कैसे रहते थे

खानाबदोश चरवाहे अपने जानवरों के साथ दूर-दूर तक घूमते थे। उनका जीवन दूध और अन्य पशुचारी उत्पादों पर निर्भर था। वे खेतिहर गृहस्थों से अनाज, कपड़े, बर्तन और ऐसी ही चीज़ों के लिए ऊन, घी इत्यादि का विनिमय भी करते थे। कुछ खानाबदोश अपने

चित्र 3

घुमंतू व्यापारियों की शृंखलाएँ भारत को बाहरी दुनिया से जोड़ती थीं। यहाँ मेवा इकट्ठा करके उसे ऊँटों पर लादा जा रहा है। मध्य एशिया के व्यापारी ऐसी वस्तुएँ भारत लाते थे और बंजारे एवं अन्य व्यापारी उन्हें स्थानीय बाज़ारों तक पहुँचाते थे।

2024-25

जानवरों पर सामानों की ढुलाई का काम भी करते थे। एक जगह से दूसरी जगह आते-जाते वे सामानों की खरीद-फ़रोख्त करते थे।

बंजारा लोग सबसे महत्त्वपूर्ण व्यापारी-खानाबदोश थे। उनका कारवाँ 'टांडा' कहलाता था। सुलतान अलाउद्दीन ख़लजी (अध्याय 3) बंजारों का ही इस्तेमाल नगर के बाज़ारों तक अनाज की ढुलाई के लिए करते थे। बादशाह जहाँगीर ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि बंजारे विभिन्न इलाकों से अपने बैलों पर अनाज ले जाकर शहरों में बेचते थे। सैन्य अभियानों के दौरान वे मुग़ल सेना के लिए खाद्यान्नों की ढुलाई का काम करते थे। किसी भी विशाल सेना के लिए 1,00,000 बैल अनाज ढोते होंगे।

बंजारे

सत्रहवीं सदी के आरंभ में भारत आने वाले एक अँग्रेज़ व्यापारी, पीटर मुंडी, ने बंजारों का वर्णन किया:

सुबह हमारी मुलाकात बंजारों की एक टांडा से हुई जिसमें 14,000 बैल थे। सारे पशु गेहूँ और चावल जैसे अनाजों से लदे हुए थे।... ये बंजारे लोग अपनी पूरी घर-गृहस्थी–बीवी और बच्चे–अपने साथ लेकर चलते हैं। एक टांडा में कई परिवार होते हैं। उनका जीने का तरीका उन भारवाहकों से मिलता-जुलता है जो लगातार एक जगह से दूसरी जगह जाते रहते हैं। गाय-बैल उनके अपने होते हैं। कई बार वे सौदागरों के द्वारा भाड़े पर नियुक्त किए जाते हैं, लेकिन ज़्यादातर वे खुद सौदागर होते हैं। अनाज जहाँ सस्ता उपलब्ध है, वहाँ से वे खरीदते हैं और उस जगह ले जाते हैं जहाँ वह महँगा है। वहाँ से वे फिर ऐसी चीज़ें लाद लेते हैं जो किसी और जगह मुनाफ़े के साथ बेची जा सकती हैं।...टांडा में छह से सात सौ तक लोग हो सकते हैं।... वे एक दिन में 6 या 7 मील से ज़्यादा सफ़र नहीं करते–यहाँ तक कि ठंडे मौसम में भी। अपने गाय-बैलों पर से सामान उतारने के बाद वे उन्हें चरने के लिए खुला छोड़ देते हैं, क्योंकि यहाँ जमीन पर्याप्त है और उन्हें रोकने वाला कोई नहीं।

? *पता करें कि आजकल गाँव से शहरों तक अनाज ले जाने का काम कैसे होता है। बंजारों के तौर-तरीकों से यह किन मायनों में भिन्न या समान हैं?*

खानाबदोश और भ्रमणशील समूह

खानाबदोश घुमंतू लोग होते हैं। उनमें से कई पशुचारी होते हैं जो अपनी रेवड़ और पशुवृंद के साथ एक चरागाह से दूसरे चरागाह घूमते रहते हैं। इसी तरह दस्तकार, फेरीवाले और नृतक-गायक एवं अन्य तमाशबीन भ्रमणशील समूह अपना कामधंधा करते-करते एक जगह से दूसरी जगह की यात्र पर रहते हैं। खानाबदोश और भ्रमणशील समूह, दोनों अकसर उस जगह लौट कर आते हैं जहाँ उन्होंने पिछले साल दौरा किया था।

2024-25

चित्र 4
कांस्य मगरमच्छ कुट्टिया कोंड जनजाति, उड़ीसा

कई पशुचारी जनजातियाँ मवेशी और घोड़ों, जैसे जानवरों को पालने-पोसने और संपन्न लोगों के हाथ उन्हें बेचने का काम करती थीं। छोटे-मोटे फेरीवालों की विभिन्न जातियाँ भी एक गाँव से दूसरे गाँव भ्रमण करती थीं। ये लोग रस्सी, सरकंडे की चीज़ें, फूस की चटाई और मोटे बोरे जैसे माल बनाते और बेचते थे। कभी-कभी भिक्षुक लोग भी घूमंतू सौदागरों का काम करते थे। नर्तकों, गायकों और अन्य तमाशबीनों की भी जातियाँ थीं जो विभिन्न नगरों और गाँवों में कमाई के लिए अपनी कला का प्रदर्शन करती थीं।

बदलता समाज – नयी जातियाँ और श्रेणियाँ

जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था और समाज की ज़रूरतें बढ़ती गईं, नए हुनर वाले लोगों की आवश्यकता पड़ी। वर्णों के भीतर छोटी-छोटी जातियाँ उभरने लगीं। उदाहरण के लिए, ब्राह्मणों के बीच नयी जातियाँ सामने आईं। दूसरी ओर, कई जनजातियों और सामाजिक समूहों को जाति-विभाजित समाज में शामिल कर लिया गया और उन्हें जातियों का दर्जा दे दिया गया। विशेषज्ञता प्राप्त शिल्पियों– सुनार, लोहार, बढ़ई और राजमिस्त्री–को भी ब्राह्मणों द्वारा जातियों के रूप में मान्यता दे दी गई। वर्ण की बजाय जाति, समाज के संगठन का आधार बनी।

जाति पर विचार-विमर्श

वर्तमान तमिलनाडु के तिरूचिरापल्ली ताल्लुक में स्थित उईयाकोंडन उदेयार के बारहवीं शताब्दी के अभिलेख में ब्राह्मणों की एक सभा (अध्याय 2) के विचार-विमर्श का वर्णन मिलता है।

वे रथकारों (शाब्दिक अर्थ, रथ बनाने वाले लोग) की सामाजिक स्थिति पर विचार-विमर्श कर रहे थे। उन्होंने इस जाति के कामकाज तय किए जिनमें वास्तुकला, रथों और गाड़ियों का निर्माण, मंदिर द्वार बनाना, मूर्तियाँ स्थापित करना, बलि के लिए लकड़ियों से बने साज-सामान तैयार करना, मंडप बनाना और राजा के लिए ज़ेवर बनाना शामिल थे।

© NCERT not to be republished

ग्यारहवीं और बारहवीं सदी तक आते-आते क्षत्रियों के बीच नए राजपूत गोत्रों की ताकत में काफ़ी इजाफ़ा हुआ। वे हूण, चंदेल, चालुक्य और कुछ दूसरी वंश-परंपराओं से आते थे। इनमें से कुछ पहले जनजातियों में आते थे और बाद में कई कुल राजपूत मान लिए गए। धीरे-धीरे उन्होंने पुराने शासकों की जगह ले ली विशेषतः कृषि वाले क्षेत्रों में। यहाँ कई तरह के परिवर्तन हो रहे थे और शासकों ने शक्तिशाली राज्यों के निर्माण में अपनी संपदा का इस्तेमाल किया।

शासकों के रूप में राजपूत गोत्रों के उदय के उदाहरण का जनजातीय लोगों ने अनुसरण किया। धीरे-धीरे ब्राह्मणों के समर्थन से कई जनजातियाँ, जाति व्यवस्था का हिस्सा बन गईं। लेकिन केवल प्रमुख जनजातीय परिवार ही शासक वर्ग में शामिल हो पाए। उनकी बहुसंख्यक आबादी, समाज की छोटी जातियों में ही जगह बना पाई। दूसरी तरफ़ पंजाब, सिंध और उत्तर-पश्चिमी सरहद की प्रभुत्वशाली जनजातियों ने काफ़ी पहले इस्लाम को अपना लिया था। वे जाति व्यवस्था को नकारते रहे। सनातनी हिंदू धर्म के द्वारा प्रस्तावित गैर-बराबरी वाली सामाजिक व्यवस्था इन इलाकों में बड़े पैमाने पर स्वीकार नहीं की गई।

राज्यों की उत्पत्ति, जनजातीय लोगों के बीच हुए सामाजिक बदलाव से गहराई से संबंधित है। हमारे इतिहास के इस महत्त्वपूर्ण हिस्से के दो उदाहरण नीचे उल्लिखित हैं।

नज़दीक से एक नज़र

गोंड

गोंड लोग, गोंडवाना नामक विशाल वनप्रदेश में रहते थे। वे **स्थानांतरीय कृषि** अर्थात् जगह बदल-बदल कर खेती करते थे। विशाल गोंड जनजाति कई छोटे-छोटे कुलों में भी बँटी हुई थी। प्रत्येक कुल का अपना राजा या राय होता था। जिस समय दिल्ली के सुलतानों की ताकत घट रही थी, उसी समय कुछ बड़े गोंड राज्य छोटे गोंड सरदारों पर हावी होने लगे थे। अकबर के शासनकाल के एक इतिहास *अकबरनामा* में उल्लिखित है कि गढ़ कटंगा के गोंड राज्य में 70,000 गाँव थे।

इन राज्यों की प्रशासनिक व्यवस्था केंद्रीकृत हो रही थी। राज्य, गढ़ों में विभाजित थे। हर गढ़ किसी खास गोंड कुल के नियंत्रण में था। ये पुनः चौरासी गाँवों की इकाइयों में विभाजित होते थे, जिन्हें चौरासी कहा

चित्र 5
गोंड महिला

स्थानांतरीय कृषि
किसी वनप्रांत के पेड़ों और झाड़ियों को पहले काटा और जलाया जाता है। उसकी राख में ही फ़सल बो दी जाती है। जब यह ज़मीन अपनी उर्वरता खो देती है, तब ज़मीन का दूसरा टुकड़ा साफ़ किया जाता है और इसी तरह से फ़सल उगाई जाती है।

© NCERT not to be republished

मानचित्र 2
गोंडवाना

जाता था। चौरासी का उप-विभाजन बरहोतों में होता था, जो बारह-बारह गाँवों को मिला कर बनते थे।

बड़े राज्यों के उदय ने गोंड समाज के चरित्र को बदल डाला। उनका मूलतः बराबरी वाला समाज धीरे-धीरे असमान सामाजिक वर्गों में विभाजित हो गया। ब्राह्मण लोगों ने गोंड राजाओं से अनुदान में भूमि प्राप्त की और अधिक प्रभावशाली बन गए। गोंड सरदारों को अब राजपूतों के रूप में मान्यता प्राप्त करने की चाहत हुई। इसलिए गढ़ कटंगा के गोंड राजा अमन दास ने संग्राम शाह की उपाधि धारण की। उसके पुत्र दलपत ने महोबा के चंदेल राजपूत राजा सालबाहन की पुत्री राजकुमारी दुर्गावती से विवाह किया।

दलपत की मृत्यु कम उम्र में ही हो गई। रानी दुर्गावती बहुत योग्य थी और उसने अपने पाँच साल के पुत्र बीर नारायण के नाम पर शासन की कमान सँभाली। उसके समय में राज्य का और अधिक विस्तार हुआ। 1565 में आसिफ़ खान के नेतृत्व में मुग़ल सेनाओं ने गढ़ कटंगा पर हमला किया। रानी दुर्गावती ने इसका जम कर सामना किया। उसकी हार हुई और उसने समर्पण

चित्र 6
एक नक्काशीदार दरवाज़ा, गोंड जनजाति, बस्तर क्षेत्र, मध्य प्रदेश

© NCERT not to be republished

करने की बजाय मर जाना बेहतर समझा। उसका पुत्र भी तुरंत बाद लड़ता हुआ मारा गया।

गढ़ कटंगा एक समृद्ध राज्य था। इसने हाथियों को पकड़ने और दूसरे राज्यों में उनका निर्यात करने के व्यापार में ख़ासा धन कमाया। जब मुग़लों ने गोंडों को हराया, तो उन्होंने लूट में बेशकीमती सिक्के और हाथी बहुतायत में हथिया लिए। उन्होंने राज्य का एक भाग अपने कब्ज़े में ले किया और शेष बीर नारायण के चाचा चंदर शाह को दे दिया। गढ़ कटंगा के पतन के बावज़ूद गोंड राज्य कुछ समय तक चलता रहा। लेकिन वे काफ़ी कमज़ोर हो गए और बाद में अधिक शक्तिशाली बुंदेलों और मराठों के खिलाफ़ उनके संघर्ष असफल रहे।

अहोम

अहोम लोग मौजूदा म्यानमार से आकर तेरहवीं सदी में ब्रह्मपुत्र घाटी में आ बसे। उन्होंने भुइयाँ (भूस्वामी) लोगों की पुरानी राजनीतिक व्यवस्था का दमन करके नए राज्य की स्थापना की। सोलहवीं सदी के दौरान उन्होंने चुटियों (1523) और कोच-हाजो (1581) के राज्यों को अपने राज्य में मिला लिया। उन्होंने कई अन्य जनजातियों को भी अधीन कर लिया। अहोमों ने एक बड़ा राज्य बनाया और इसके लिए 1530 के दशक में ही, इतने वर्षों पहले, आग्नेय अस्त्रों का इस्तेमाल किया। 1660 तक आते-आते वे उच्चस्तरीय बारूद और तोपों का निर्माण करने में सक्षम हो गए थे।

लेकिन अहोम लोगों को दक्षिण-पश्चिम से कई आक्रमणों का सामना करना पड़ा। 1662 में मीर जुमला के नेतृत्व में मुग़लों ने अहोम राज्य पर हमला किया। बहादुरी से सामना करने के बावज़ूद अहोम लोगों की पराजय हुई। लेकिन उस क्षेत्र पर मुग़लों का प्रत्यक्ष नियंत्रण ज़्यादा समय तक बना नहीं रह सका।

असम में लाचित बरफुकन ने मुग़ल सेना को हराया

लाचित बरफुकन अहोम सेना के सेनापति थे। 1671 में सरायघाट के युद्ध में लाचित बरफुकन ने मुग़ल शासक औरंगजेब की सेना को पराजित किया था। मुग़ल सेना में 18000 घुड़सवार, 30000 सैनिक, 15000 तीरंदाज, 5000 बंदूक सैनिक और 1000 तोप थे। जिसका नेतृत्व अंबर के शासक राम सिंह द्वारा किया गया था। लाचित के सैन्य कौशल से मुग़ल सेना के विस्तार पर रोक लग गई। नौसेना द्वारा ब्रहमपुत्र नदी में लड़ी गई यह लड़ाई इतिहास में सरायघाट के युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है।

(स्रोत: *लचित बरफुफन, जनसंयोग असम, डायरेक्टोरेट ऑफ इन्फारमेशन एण्ड पब्लिक रिलेशंस, गवर्नमेंट ऑफ असम, दिसपुर गुवाहाटी*

मानचित्र 3

पूर्वी भारत की जनजातियाँ

© NCERT not to be republished

चित्र 7
कान के आभूषण, कबोई नागा जनजाति, मणिपुर

अहोम राज्य, बेगार पर निर्भर था। राज्य के लिए जिन लोगों से जबरन काम लिया जाता था, वे 'पाइक' कहलाते थे। अहोम राज्य में एक जनगणना की गई थी। प्रत्येक गाँव को अपनी बारी आने पर निश्चित संख्या में पाइक भेजने होते थे। इसके लिए जनगणना के बाद सघन आबादी वाले इलाकों से कम आबादी वाले इलाकों में लोगों को स्थानांतरित किया गया था। इस प्रकार अहोम कुल टूट गए। सत्रहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध पूरा होते-होते प्रशासन खासा केंद्रीकृत हो चुका था।

लगभग सभी वयस्क पुरुष युद्ध के दौरान सेना में अपनी सेवाएँ प्रदान करते थे। दूसरे समय में वे बाँध, सिचाई व्यवस्था इत्यादि के निर्माण या अन्य सार्वजनिक कार्यों में जुटे रहते थे। अहोम लोग चावल की खेती के नए तरीके भी अमल में लाए।

अहोम समाज, कुलों में विभाजित था, जिन्हें 'खेल' कहा जाता था। वहाँ दस्तकारों की बहुत कम जातियाँ थीं। इसलिए अहोम क्षेत्र में दस्तकार निकटवर्ती क्षेत्रों से आए थे। एक खेल के नियंत्रण में प्रायः कई गाँव होते थे। किसान को अपने ग्राम समुदाय के द्वारा ज़मीन दी जाती थी। समुदाय की सहमति के बगैर राजा तक इसे वापस नहीं ले सकता था।

शुरुआत में अहोम लोग, अपने जनजातीय देवताओं की उपासना करते थे। लेकिन सत्रहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में ब्राह्मणों के प्रभाव में बढ़ोत्तरी हुई। मंदिरों और ब्राह्मणों को राजा के द्वारा भूमि अनुदान में दी गई। सिब सिंह (1714–44) के काल में हिंदू धर्म वहाँ का प्रधान धर्म बन गया था। लेकिन अहोम राजाओं ने हिंदू धर्म को अपनाने के बाद अपनी पारंपरिक आस्थाओं को पूरी तरह से नहीं छोड़ा था।

आपके विचार में मुग़लों ने अहोम प्रदेश को जीतने का प्रयास क्यों किया?

अहोम समाज, एक अत्यंत परिष्कृत समाज था। कवियों और विद्वानों को अनुदान में ज़मीन दी जाती थी। नाट्य-कर्म को प्रोत्साहन दिया जाता था। संस्कृत की महत्त्वपूर्ण कृतियों का स्थानीय भाषा में अनुवाद किया गया था। *बुरंजी* नामक ऐतिहासिक कृतियों को पहले अहोम भाषा में और फिर असमिया में लिखा गया था।

निष्कर्ष

जिस युग की हम चर्चा करते आए हैं, उस युग के दौरान उपमहाद्वीप में काफ़ी सामाजिक परिवर्तन हुआ। वर्ण आधारित समाज और जनजातीय

2024-25

© NCERT not to be republished

लोग एक-दूसरे के साथ लगातार संपर्क में आते रहे। इस आदान-प्रदान ने दोनों तरह के समाजों में अनुकूलन और बदलाव की प्रक्रिया चलाई। बहुत-सी विभिन्न प्रकार की जनजातियाँ थीं और उन्होंने विभिन्न प्रकार की जीविकाएँ अपनाईं। कालांतर में उनमें से कई जाति आधारित समाज में शामिल हो गईं। लेकिन कईयों ने जाति व्यवस्था और सनातनी हिंदू धर्म, दोनों को ही नकार दिया। कुछ जनजातियों ने सुसंगठित प्रशासनिक व्यवस्था वाले विस्तृत राज्यों की स्थापना की। इस तरह वे राजनीतिक रूप से ताकतवर हो गए। इसने उन्हें बृहत्तर और अधिक जटिल राज्यों और साम्राज्यों के साथ संघर्ष की स्थिति में ला खड़ा किया।

कल्पना करें

आप एक ऐसे खानाबदोश समुदाय के सदस्य हैं, जो हर तीन महीने बाद अपना निवासस्थान बदलता है। इसका आपके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

फिर से याद करें

1. निम्नलिखित में मेल बैठाएँ:

गढ़	खेल
टांडा	चौरासी
श्रमिक	कारवाँ
कुल	गढ़ कटंगा
सिब सिंह	अहोम राज्य
दुर्गावती	पाइक

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:

(क) वर्णों के भीतर पैदा होती नयी जातियाँ _____ कहलाती थीं।

बीज शब्द

वर्ण
जाति
टांडा
गढ़
चौरासी
बरहोत
भुइयाँ
पाइक
खेल
बुरंजी
जनगणना

© NCERT not to be republished

(ख) _____ अहोम लोगों के द्वारा लिखी गई ऐतिहासिक कृतियाँ थीं।

(ग) _____ ने इस बात का उल्लेख किया है कि गढ़ कटंगा में 70,000 गाँव थे।

(घ) बड़े और ताकतवर होने पर जनजातीय राज्यों ने _____ और _____ को भूमि-अनुदान दिए।

3. सही या गलत बताइए:

(क) जनजातीय समाजों के पास समृद्ध वाचक परंपराएँ थीं।

(ख) उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी भाग में कोई जनजातीय समुदाय नहीं था।

(ग) गोंड राज्यों में अनेक नगरों को मिला कर चौरासी बनता था।

(घ) भील, उपमहाद्वीप के उत्तर-पूर्वी भाग में रहते थे।

4. खानाबदोश पशुचारकों और एक जगह बसे हुए खेतिहरों के बीच किस तरह का विनिमय होता था?

आइए समझें

5. अहोम राज्य का प्रशासन कैसे संगठित था?

6. वर्ण आधारित समाज में क्या परिवर्तन आए?

7. एक राज्य के रूप में संगठित हो जाने के बाद जनजातीय समाज कैसे बदला?

आइए विचार करें

8. क्या बंजारे लोग अर्थव्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण थे?

9. गोंड लोगों का इतिहास, अहोमों के इतिहास से किन मायनों में भिन्न था? क्या कोई समानता भी थी?

© NCERT not to be republished

आइए करके देखें

10. एक मानचित्र पर इस अध्याय में उल्लिखित जनजातियों के इलाकों को चिह्नित करें। किन्हीं दो के संबंध में यह चर्चा करें कि क्या उनके जीविकोपार्जन का तरीका अपने-अपने इलाकों की भौगोलिक विशेषताओं और पर्यावरण के अनुरूप था?

11. जनजातीय समूहों के संबंध में मौजूदा सरकारी नीतियों का पता लगाएँ और उनके बारे में एक बहस का आयोजन करें।

12. उपमहाद्वीप में वर्तमान खानाबदोश पशुचारी समूहों के बारे में और पता लगाएँ। वे कौन-से जानवर रखते हैं? वे प्रायः किन इलाकों में जाते रहते हैं?

© NCERT not to be republished

7 क्षेत्रीय संस्कृतियों का निर्माण

0761CH07

लोगों का वर्णन करने का एक सबसे सामान्य तरीका है उनकी बोलचाल की भाषा से उन्हें परिभाषित करना। जब हम किसी व्यक्ति को तमिल या उड़िया कहते हैं, तो आमतौर पर इसका अर्थ होता है कि वह तमिल अथवा उड़िया भाषा बोलता है और तमिलनाडु या उड़ीसा में रहता है। इसी तरह से हम प्रत्येक क्षेत्र को कुछ खास किस्म के भोजन, वस्त्र, काव्य, नृत्य, संगीत और चित्रकला से जोड़ा करते हैं। कभी-कभी हम इन अस्मिताओं को मान कर चलते हैं और सोचते हैं कि ये युग-युगांतरों से अस्तित्व में हैं। किंतु भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के बीच विभाजक सीमाओं के बनने में समय की भूमिका रही है। जिन्हें हम आज क्षेत्रीय संस्कृतियाँ समझते हैं, वे समय के साथ-साथ बदली हैं (और सच तो यह है कि आज भी बदल रही हैं)। ये क्षेत्रीय संस्कृतियाँ जटिल प्रक्रिया से विकसित हुई हैं। इस प्रक्रिया के तहत स्थानीय परंपराओं और उपमहाद्वीप के अन्य भागों के विचारों के आदान-प्रदान ने एक-दूसरे को संपन्न बनाया है। जैसा कि हम देखेंगे, कुछ परंपराएँ तो कुछ विशेष क्षेत्रों की अपनी हैं, जबकि कुछ अन्य भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में एक समान प्रतीत होती हैं। परंतु इसके अतिरिक्त, कुछ अन्य परंपराएँ एक खास इलाके के पुराने रीति-रिवाजों से तो निकली हैं, परंतु अन्य क्षेत्रों में जाकर उन्होंने एक नया रूप ले लिया है।

?

पता लगाएँ कि पिछले दस सालों में कितने नए राज्य बनाए गए हैं। क्या इनमें से प्रत्येक राज्य एक अलग क्षेत्र है?

चेर और मलयालम भाषा का विकास

आइये, भाषा और क्षेत्र के बीच अंतःसंबंध के एक उदाहरण से अपना विश्लेषण प्रारंभ करें। महोदयपुरम का चेर राज्य प्रायद्वीप के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में, जो आज के केरल राज्य का एक हिस्सा है, नौवीं शताब्दी में स्थापित किया गया। संभवतः मलयालम भाषा इस इलाके में बोली जाती थी। शासकों ने मलयालम भाषा एवं लिपि का प्रयोग अपने अभिलेखों में

© NCERT not to be republished

चित्र 1
मलयालम में रचित आरंभिक केरल का एक अभिलेख

किया। वस्तुतः इस भाषा का प्रयोग उपमहाद्वीप के सरकारी अभिलेखों में किसी क्षेत्रीय भाषा के प्रयोग के सबसे पहले उदाहरणों में से एक है।

साथ-साथ चेर लोगों ने संस्कृत की परंपराओं से भी बहुत कुछ ग्रहण किया। केरल का मंदिर-रंगमंच, जिसकी परंपरा इस युग तक खोजी जा सकती है, संस्कृत के महाकाव्यों पर आधारित था। मलयालम भाषा की पहली साहित्यिक कृतियाँ, जो लगभग बारहवीं शताब्दी की बताई जाती हैं, प्रत्यक्ष रूप से संस्कृत की ऋणी हैं। यह भी एक काफ़ी रोचक तथ्य है कि चौदहवीं शताब्दी का एक ग्रंथ लीला तिलकम, जो व्याकरण तथा काव्यशास्त्र विषयक है 'मणिप्रवालम' शैली में लिखा गया था। मणिप्रवालम का शाब्दिक अर्थ है – हीरा और मूँगा, जो यहाँ दो भाषाओं – संस्कृत तथा क्षेत्रीय भाषा – के साथ-साथ प्रयोग की ओर संकेत करता है।

पता लगाएँ कि आपके घर में आप जो भाषा/भाषाएँ बोलते हैं, उसका/उनका लेखन में सर्वप्रथम कब प्रयोग हुआ होगा।

शासक और धार्मिक परंपराएँ – जगन्नाथी संप्रदाय

अन्य क्षेत्रों में क्षेत्रीय संस्कृतियाँ, क्षेत्रीय धार्मिक परंपराओं से विकसित हुई थीं। इस प्रक्रिया का सर्वोत्तम उदाहरण है–पुरी, उड़ीसा में जगन्नाथ का संप्रदाय (जगन्नाथ का शाब्दिक अर्थ है, दुनिया का मालिक जो विष्णु का पर्यायवाची है)। आज तक जगन्नाथ की काष्ठ प्रतिमा, स्थानीय जनजातीय लोगों द्वारा बनाई जाती है जिससे यह तात्पर्य निकलता है कि जगन्नाथ मूलतः एक स्थानीय देवता थे, जिन्हें आगे चलकर विष्णु का रूप मान लिया गया।

चित्र 2
बालभद्र, सुभद्रा और जगन्नाथ की लघु मूर्तियाँ, तालपत्र की पांडुलिपि, उड़ीसा

बारहवीं शताब्दी में गंग वंश के एक अत्यंत प्रतापी राजा अनंतवर्मन ने पुरी में पुरुषोत्तम जगन्नाथ के लिए एक मंदिर बनवाने का निश्चय किया। उसके बाद 1230 में राजा अनंगभीम तृतीय ने अपना राज्य पुरुषोत्तम जगन्नाथ को अर्पित कर दिया और स्वयं को जगन्नाथ का 'प्रतिनियुक्त' घोषित किया।

© NCERT not to be republished

चित्र 3
जगन्नाथ मंदिर, पुरी

ज्यों-ज्यों इस मंदिर को तीर्थस्थल यानी तीर्थ यात्रा के केंद्र के रूप में महत्त्व प्राप्त होता गया, सामाजिक तथा राजनीतिक मामलों में भी इसकी सत्ता बढ़ती गई। जिन्होंने भी उड़ीसा को जीता, जैसे मुग़ल, मराठे और अँग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कंपनी, सबने इस मंदिर पर अपना नियंत्रण स्थापित करने का प्रयत्न किया। वे सब यह महसूस करते थे कि मंदिर पर नियंत्रण प्राप्त करने से स्थानीय जनता में उनका शासन स्वीकार्य हो जाएगा।

राजपूत और शूरवीरता की परंपराएँ

उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश लोग उस क्षेत्र को जहाँ आज का अधिकाँश राजस्थान स्थित है, राजपूताना कहते थे। इससे यह समझा जा सकता है कि वह एक ऐसा प्रदेश था, जहाँ केवल अथवा प्रमुख रूप से राजपूत ही रहा करते थे, लेकिन यह बात आंशिक रूप से ही सत्य है। ऐसे अनेक समूह थे (और आज भी हैं), जो उत्तरी तथा मध्यवर्ती भारत के अनेक क्षेत्रों में अपने आपको राजपूत कहते हैं। यह भी सच है कि राजस्थान में राजपूतों के अलावा अन्य लोग भी रहते हैं। तथापि, अकसर यह माना जाता है कि राजपूतों ने राजस्थान को एक विशिष्ट संस्कृति प्रदान की।

ये सांस्कृतिक परंपराएँ वहाँ के शासकों के आदर्शों तथा अभिलाषाओं के साथ घनिष्ठता से जुड़ी हुई थीं। लगभग आठवीं शताब्दी से आज के राजस्थान के अधिकांश भाग पर विभिन्न परिवारों के राजपूत राजाओं का शासन रहा। पृथ्वीराज (अध्याय 2) एक ऐसा ही शासक था। ये शासक ऐसे शूरवीरों के आदर्शों को अपने हृदय में

चित्र 4
बीकानेर के राजकुमार राजसिंह

© NCERT not to be republished

संजोए रखते थे, जिन्होंने रणक्षेत्र में बहादुरी से लड़ते हुए अकसर मृत्यु का वरण किया, मगर पीठ नहीं दिखाई। राजपूत शूरवीरों की कहानियाँ काव्यों एवं गीतों में सुरक्षित हैं ये विशेष रूप से प्रशिक्षित चारण-भाटों द्वारा गाई जाती हैं। ये काव्य एवं गीत ऐसे शूरवीरों की स्मृति को सुरक्षित रखते थे और उनसे यह आशा की जाती थी कि वे अन्य जनों को भी उन शूरवीरों का अनुकरण करने के लिए प्रेरित एवं प्रोत्साहित करेंगे। साधारण जन भी इन कहानियों से आकर्षित होते थे। इन कहानियों में अकसर नाटकीय स्थितियों और स्वामीभक्ति, मित्रता, प्रेम, शौर्य, क्रोध आदि प्रबल संवेगों का चित्रण होता था।

क्या स्त्रियों को भी इन कहानियों में स्थान प्राप्त था? कहीं-कहीं यह चित्रित किया गया है कि स्त्रियाँ अपने शूरवीर पतियों का जीवन-मरण, दोनों में अनुसरण करती थीं। सती प्रथा यानी विधवाओं

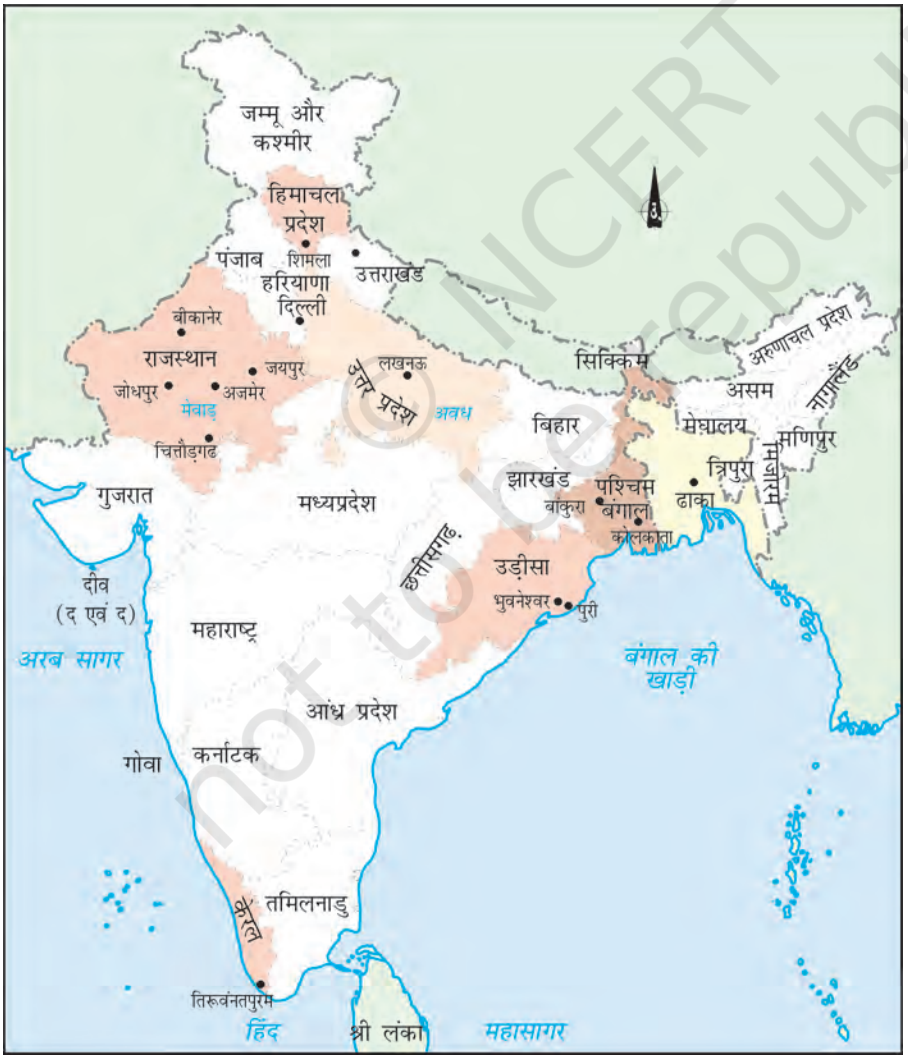

मानचित्र 1
वह क्षेत्र जिनकी इस अध्याय में चर्चा की गई है।

© NCERT not to be republished

द्वारा अपने मृतक पतियों की चिता पर ज़िंदा जल जाने की प्रथा का भी कुछ कहानियों में उल्लेख पाया जाता है। इस प्रकार जो लोग शूरवीरता के आदर्शों का पालन करते थे, उन्हें अकसर इस आदर्श के लिए अपने जीवन का बलिदान करना होता था।

पता लगाएँ कि क्या आपके नगर/गाँव में शूरवीरों/वीरांगनाओं की परंपरा रही है? यदि हाँ, तो ये परंपराएँ राजपूतों के वीरतापूर्ण आदर्शों से कितनी समान या भिन्न हैं?

क्षेत्रीय सीमांतों से परे – कत्थक *नृत्य* की कहानी

यदि शूरवीरता की परंपराएँ भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न रूपों में मिल सकती हैं, तो नृत्य के विषय में भी यही सच है। आइए, नृत्य के एक रूप, कत्थक, के इतिहास को देखें। यह नृत्य शैली उत्तर भारत के अनेक भागों से जुड़ी है। 'कत्थक' शब्द 'कथा' शब्द से निकला है, जिसका प्रयोग संस्कृत तथा अन्य भाषाओं में कहानी के लिए किया जाता है। कत्थक मूल रूप से उत्तर भारत के मंदिरों में कथा यानी कहानी सुनाने वालों की एक जाति थी। ये कथाकार अपने हाव-भाव तथा संगीत से अपने कथावाचन को अलंकृत किया करते थे। पंद्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दियों में भक्ति आंदोलन के प्रसार के साथ कत्थक एक विशिष्ट नृत्य शैली का रूप धारण करने लगा। राधा-कृष्ण के पौराणिक आख्यान (कहानियाँ) लोक नाट्य के रूप में प्रस्तुत किए जाते थे, जिन्हें 'रासलीला' कहा जाता था। रासलीला में लोक नृत्य के साथ कत्थक कथाकार के मूल हाव-भाव भी जुड़े होते थे।

मुग़ल बादशाहों और उनके अभिजातों के शासनकाल में कत्थक नृत्य राजदरबार में प्रस्तुत किया जाता था, जहाँ इस नृत्य ने अपने वर्तमान अभिलक्षण अर्जित किए और वह एक विशिष्ट नृत्य शैली के रूप में विकसित हो गया। आगे चलकर यह दो परंपराओं अर्थात् 'घरानों' में फूला-फला: राजस्थान (जयपुर) के राजदरबारों में और लखनऊ में। अवध के अंतिम नवाब वाजिदअली शाह के संरक्षण में यह एक प्रमुख कला-रूप में उभरा। 1850–1875 के दौरान यह नृत्य शैली के रूप में इन दो क्षेत्रों में ही नहीं, बल्कि आज के पंजाब, हरियाणा, जम्मू और कश्मीर, बिहार तथा मध्य प्रदेश के निकटवर्ती इलाकों में भी पक्के तौर पर संस्थापित हो गया। इसकी प्रस्तुति में क्लिष्ट तथा द्रुत पद संचालन, उत्तम वेशभूषा तथा कहानियों के प्रस्तुतीकरण एवं अभिनय पर ज़ोर दिया जाने लगा।

चित्र 5
नृत्य की कक्षा, लक्ष्मण मंदिर, खजुराहो

© NCERT not to be republished

अनेक अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों की तरह कत्थक को भी उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दियों में अधिकाँश ब्रिटिश प्रशासकों ने नापसंद किया। फिर भी यह 'जीवित' बचा रहा और गणिकाओं द्वारा पेश किया जाता रहा। स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद तो देश में इसे छह 'शास्त्रीय' नृत्य रूपों में मान्यता मिल गई।

श्रेण्य, शास्त्रीय *ऐतिहासिक रूप से इस शब्द का तात्पर्य कला और साहित्य की उन महान कृतियों से है जिनकी रचना पाँचवीं तथा चौथी शताब्दी ई.पू. में प्राचीन यूनान में की गई थी। यही वह काल था जब यूनान में एथेंस उन्नति करते–करते एक अत्यंत उत्कृष्ट स्थिति पर पहुँच गया था। एथेंस की यह उन्नत स्थिति निकट और मध्य पूर्व से भारतीय सीमा पर सिकंदर की विजयों तक बनी रही।*
स्रोत: इतिहास का शब्दकोष विद्यालयों के लिए (त्रिभाषी), एन.सी.ई.आर.टी.

शास्त्रीय नृत्य

किस कला रूप को 'शास्त्रीय' माना जाए? इस प्रश्न का उत्तर देना अकसर बहुत कठिन होता है। क्या हम उस रूप या शैली को 'शास्त्रीय' कहते हैं, जिसका विषय धार्मिक हो? अथवा क्या हम उसे शास्त्रीय इसलिए मानते हैं, क्योंकि उसके लिए अत्यधिक कौशल की आवश्यकता होती है, जो कई वर्षों के लंबे प्रशिक्षण से ही प्राप्त होता है। अथवा यह शास्त्रीय इसलिए है, क्योंकि यह निर्धारित नियमों के अनुसार ही प्रदर्शित या प्रस्तुत किया जाता है और उसमें विभिन्नताओं को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता है? ये ऐसे प्रश्न हैं, जिन पर हमें विचार करने की आवश्यकता है। यह भी स्मरणीय है कि बहुत-से ऐसे नृत्य-रूपों में, जिन्हें 'लोकनृत्य' की श्रेणी में रखा गया है, वे विशिष्टताएँ पाई जाती हैं, जिन्हें 'शास्त्रीय' रूपों का विशिष्ट लक्षण बताया जाता है। यद्यपि 'शास्त्रीय' विशेषण का प्रयोग उन कला रूपों की श्रेष्ठता का सूचक हो सकता है, फिर भी यह हमेशा शब्दशः सही नहीं होता है।

अन्य नृत्य-रूप, जिन्हें इस समय शास्त्रीय माना जाता है, निम्नलिखित हैं:

भरतनाट्यम् (तमिलनाडु)
कथाकली (केरल)
ओडिसी (उड़ीसा)
कुचिपुड़ि (आंध्र प्रदेश)
मणिपुरी (मणिपुर)

चित्र 6
कत्थक नृत्यांगनाएँ, एक दरबारी चित्र

इनमें से किसी एक नृत्य-रूप के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करें।

2024-25

संरक्षकों के लिए चित्रकला – लघुचित्रों की परंपरा

एक अन्य परंपरा जो कई रीतियों से विकसित हुई, वह थी लघुचित्रों की परंपरा। लघुचित्र (जैसा कि उनके नाम से पता चलता है) छोटे आकार के चित्र होते हैं, जिन्हें आमतौर पर जल रंगों से कपड़े या कागज़ पर चित्रित किया जाता है। प्राचीनतम लघुचित्र, तालपत्रों अथवा लकड़ी की तख्तियों पर चित्रित किए गए थे। इनमें से सर्वाधिक सुंदर चित्र, जो पश्चिम भारत में पाए गए जैन ग्रंथों को सचित्र बनाने के लिए प्रयोग किए गए थे। मुग़ल बादशाह अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने अत्यंत कुशल चित्रकारों को संरक्षण प्रदान किया था, जो प्राथमिक रूप से इतिहास और काव्यों की पाण्डुलिपियाँ चित्रित करते थे। ये पांडुलिपियाँ आमतौर पर चटक रंगों में चित्रित की जाती थीं और उनमें दरबार के दृश्य, लड़ाई तथा शिकार के दृश्य और सामाजिक जीवन के अन्य पहलू चित्रित किए जाते थे। अकसर उपहार के तौर पर भी इन चित्रों का आदान-प्रदान किया जाता था और ये कुछ गिने-चुने लोगों – बादशाह और उनके घनिष्ठ जनों – द्वारा ही देखे जा सकते थे।

चित्र 7
शिकार के दौरान आराम करते हुए अकबर, मुग़ल लघुचित्र

मुग़ल साम्राज्य के पतन के साथ अनेक चित्रकार मुग़ल दरबार छोड़कर नए उभरने वाले क्षेत्रीय राज्यों के दरबारों में चले गए। परिणामस्वरूप मुगलों की कलात्मक रुचियों ने दक्षिण के क्षेत्रीय दरबारों और राजस्थान के राजपूती राजदरबारों को प्रभावित किया। लेकिन इसके साथ ही उन्होंने अपनी विशिष्ट विशेषताओं को सुरक्षित रखा और उनका विकास भी किया। मुग़ल उदाहरणों का अनुसरण करते हुए, शासकों तथा उनके दरबारों के दृश्य चित्रित किए जाने लगे। इनके साथ-साथ, मेवाड़, जोधपुर, बूंदी, कोटा और किशनगढ़ जैसे केंद्रों में पौराणिक कथाओं तथा काव्यों के विषयों का चित्रण बराबर जारी रहा।

2024-25

चित्र 8
होली खेलते हुए महाराणा राम सिह II, राजपूत लघुचित्र, कोटा

ऐसा ही एक अन्य क्षेत्र था, आधुनिक हिमाचल प्रदेश के इर्द-गिर्द हिमालय की तलहटी का इलाका। सत्रहवीं शताब्दी के बाद वाले वर्षों में, इस क्षेत्र में लघुचित्रकला की एक साहसपूर्ण एवं भावप्रवण शैली का विकास हो गया, जिसे 'बसोहली' शैली कहा जाता है। यहाँ जो सबसे लोकप्रिय पुस्तक चित्रित की गई वह थी– भानुदत्त की *रसमंजरी*। 1739 में नादिरशाह के आक्रमण और दिल्ली विजय के परिणामस्वरूप मुग़ल कलाकार, मैदानी इलाकों की

चित्र 9
कृष्ण, राधा और उसकी सखियाँ, पहाड़ी लघुचित्र, कांगड़ा

© NCERT not to be republished

अनिश्चितताओं से बचने के लिए पहाड़ी क्षेत्रों की ओर पलायन कर गए। उन्हें वहाँ जाते ही आश्रयदाता तैयार मिले, जिसके फलस्वरूप चित्रकारी की कांगड़ा शैली विकसित हुई। अठारहवीं शताब्दी के मध्य भाग तक, कांगड़ा के कलाकारों ने एक नयी शैली विकसित कर ली, जिसने लघु चित्रकारी में एक नई जान डाल दी। उनकी प्रेरणा का स्रोत, वहाँ की वैष्णव परंपराएँ थीं। ठंडे नीले और हरे रंगों सहित कोमल रंगों का प्रयोग और विषयों का काव्यात्मक निरूपण कांगड़ा शैली की विशेषता थी।

स्मरण रहे कि साधारण स्त्री-पुरुष भी बर्तनों, दीवारों, कपड़ों, फ़र्श आदि पर अपनी कलाकृतियाँ चित्रित करते थे। कला के इन नमूनों में से कुछ ही बच पाते थे। इसके विपरीत लघुचित्र राजमहलों में सावधानीपूर्वक रखे जाते थे, जिससे वे सदियों तक सुरक्षित रहें।

बंगाल – नज़दीक से एक नज़र

एक क्षेत्रीय भाषा का विकास

जैसा कि हमने प्रारंभ में देखा था, हम अकसर क्षेत्रों के नाम वहाँ के निवासियों द्वारा बोली जाने वाली भाषा के अनुसार निर्धारित करते हैं। इसलिए हम यह मान लेते हैं कि बंगाल में लोग हमेशा बंगाली (बंगला) ही बोलते थे। किंतु यह एक दिलचस्प बात है कि आज बंगाली, संस्कृत से निकली हुई भाषा मानी जाती है। प्रारंभिक (ईसा-पूर्व प्रथम सहस्राब्दी के मध्य भाग के) संस्कृत ग्रंथों के अध्ययन से यह पता चलता है कि बंगाल के लोग संस्कृत से उपजी हुई भाषाएँ नहीं बोलते थे। तो फिर नई भाषा का उद्भव कैसे हुआ?

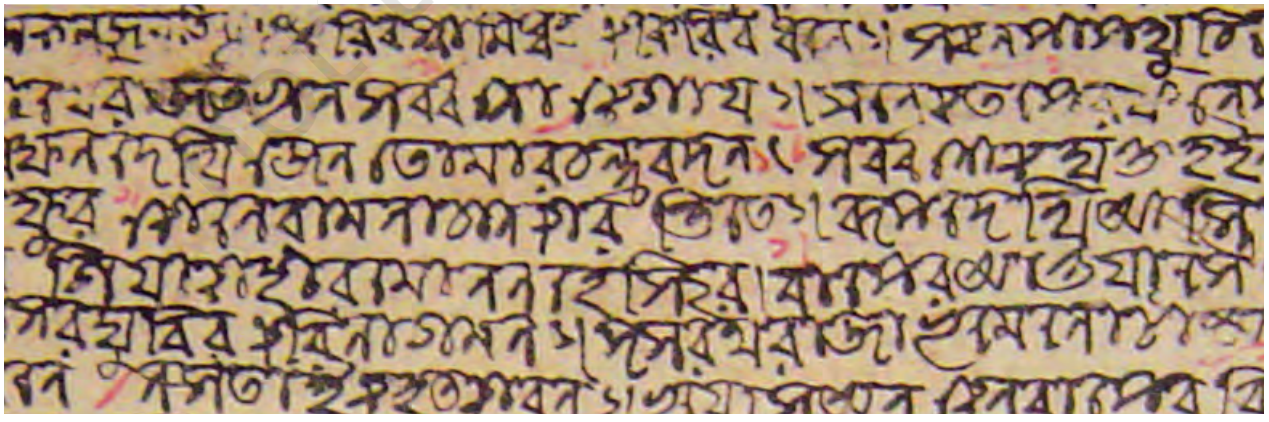

चित्र 10
सबसे पहली बंगाली रामायण के तालपत्र की पांडुलिपि का एक पृष्ठ

© NCERT not to be republished

ईसा पूर्व चौथी-तीसरी शताब्दी से बंगाल और मगध (दक्षिण बिहार) के बीच वाणिज्यिक संबंध स्थापित होने लगे थे, जिसके कारण संभवतः संस्कृत का प्रभाव बढ़ता गया होगा। चौथी शताब्दी के दौरान, गुप्तवंशीय शासकों ने उत्तरी बंगाल पर अपना राजनीतिक नियंत्रण स्थापित कर लिया और वहाँ ब्राह्मणों को बसाना शुरू कर दिया। इस प्रकार गंगा की मध्यघाटी के भाषायी तथा सांस्कृतिक प्रभाव अधिक प्रबल हो गए और सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री ह्यून सांग ने यह पाया कि बंगाल में सर्वत्र संस्कृत से संबंधित भाषाओं का प्रयोग हो रहा था।

आठवीं शताब्दी से पाल शासकों के अंतर्गत एक क्षेत्रीय राज्य का उद्भव हो गया (अध्याय 2)। चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दियों के बीच बंगाल पर सुल्तानों का शासन रहा, जो दिल्ली में स्थित शासकों से स्वतंत्र थे (अध्याय 3)। 1586 में जब अकबर ने इस प्रदेश (बंगाल) को जीत लिया, तो उसे 'सूबा' माना जाने लगा। उस समय प्रशासन की भाषा तो फ़ारसी थी, लेकिन बंगाली एक क्षेत्रीय भाषा के रूप में विकसित हो रही थी।

वस्तुतः पंद्रहवीं शताब्दी तक आते-आते उपभाषाओं तथा बोलियों का बंगाली समूह, एक सामान्य साहित्यिक भाषा के द्वारा एकबद्ध हो गया। यह साहित्यिक भाषा उस क्षेत्र के पश्चिमी भाग की बोलचाल की भाषा थी, जिसे अब पश्चिमी बंगाल कहा जाता है। यद्यपि बंगाली का उद्भव संस्कृत से ही हुआ है, पर यह अपने क्रम विकास की अनेक अवस्थाओं से गुजरी है। इसके अलावा ग़ैर-संस्कृत शब्दों का एक विशाल शब्द भंडार, जो जनजातीय भाषाओं, फ़ारसी और यूरोपीय भाषाओं सहित अनेक स्रोतों से इसे प्राप्त हुआ है, आधुनिक बंगाली का एक हिस्सा बन गया है।

बंगाली के प्रारंभिक साहित्य को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है– एक श्रेणी, संस्कृत की ऋणी है और दूसरी, उससे स्वतंत्र है। पहली श्रेणी में संस्कृत महाकाव्यों के अनुवाद, 'मंगलकाव्य' (शाब्दिक अर्थों में शुभ यानी मांगलिक काव्य, जो स्थानीय देवी-देवताओं से संबंधित है), और भक्ति साहित्य जैसे– गौड़ीय वैष्णव आंदोलन के नेता श्री चैतन्य देव की जीवनियाँ (अध्याय 6) आदि शामिल हैं।

दूसरी श्रेणी में नाथ साहित्य शामिल है जैसे, मैनामती-गोपीचंद्र के गीत, धर्म ठाकुर की पूजा से संबंधित कहानियाँ, परीकथाएँ, लोककथाएँ और गाथागीत।

© NCERT not to be republished

मैनामती, गोपीचंद्र और धर्म ठाकुर

नाथ लोग, संन्यासी होते थे जो तरह-तरह की यौगिक क्रियाएँ करते थे।

यह गीत-विशेष, जो अकसर अभिनीत किया जाता है, यह बताता है कि रानी मैनामती ने अपने पुत्र गोपीचंद्र को अनेक बाधाओं के समक्ष, संन्यास का मार्ग अपनाने को किस प्रकार प्रोत्साहित किया था।

धर्म ठाकुर एक क्षेत्रीय लोकप्रिय देव हैं, जिनकी पूजा अकसर एक पत्थर या काठ की मूर्ति के रूप में की जाती है।

पहली श्रेणी के ग्रंथों का काल-निर्णय करना अपेक्षाकृत सरल है, क्योंकि ऐसी अनेक पांडुलिपियाँ पाई गई हैं, जिनमें यह इंगित किया गया है कि उनकी रचना पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और अठारहवीं शताब्दी के मध्य भाग के बीच की गई थी। दूसरी श्रेणी की कृतियाँ मौखिक रूप से कही-सुनी जाती थीं, इसलिए उनका काल-निर्णय सही-सही नहीं किया जा सकता है। वे खासतौर पर पूर्वी बंगाल में लोकप्रिय थीं, जहाँ ब्राह्मणों का प्रभाव अपेक्षाकृत कम था।

आपके विचार से द्वितीय श्रेणी की कृतियाँ लिखित रूप में क्यों नहीं रखी जाती थीं?

पीर और मंदिर

सोलहवीं शताब्दी से लोगों ने बड़ी संख्या में पश्चिम बंगाल के कम उपजाऊ क्षेत्रों को छोड़कर दक्षिण-पूर्वी बंगाल के जंगली तथा दलदली इलाकों में प्रवास करना शुरू कर दिया था। ज्यों-ज्यों वे पूर्व की ओर बढ़ते गए, वे जंगलों को साफ़ करके भूमि में धान की खेती करने लगे। शनैः शनैः स्थानीय मछुआ तथा स्थानांतरीय खेती करने वाले लोग, जो अकसर जनजातीय थे, किसानों के नए समुदायों में मिल गए।

पीर
फ़ारसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है आध्यात्मिक मार्गदर्शक

इन्हीं दिनों बंगाल पर मुग़लों का नियंत्रण स्थापित हो गया था, जिन्होंने पूर्वी डेल्टा प्रदेश के केंद्रीय भाग में स्थित ढाका नगर में अपनी राजधानी स्थापित की। अधिकारी और कर्मचारी लोग भूमि प्राप्त करके अकसर उस पर मसजिदें बना लेते थे, जो इन इलाकों के धार्मिक रूपांतरण के केंद्रों के रूप में काम आती थीं।

प्रारंभ में बाहर से आकर यहाँ बसने वाले लोग इन अस्थिर परिस्थितियों में रहने के लिए कुछ व्यवस्था तथा आश्वासन चाहते थे। ये सुख-सुविधाएँ तथा आश्वासन उन्हें समुदाय के नेताओं ने प्रदान कीं। ये नेता शिक्षकों और निर्णायकों की भूमिकाएँ भी अदा करते थे। कभी-कभी ऐसा समझा जाता था,

© NCERT not to be republished

कि इन नेताओं के पास अलौकिक शक्तियाँ हैं। स्नेह और आदर से लोग इन्हें **पीर** कहा करते थे।

इस पीर श्रेणी में संत या सूफ़ी और अन्य धार्मिक महानुभाव, साहसी उपनिवेशी, देवत्व प्राप्त सैनिक एवं योद्धा, विभिन्न हिंदू एवं बौद्ध देवी-देवता और यहाँ तक कि **जीवात्माएँ** भी शामिल थे। पीरों की पूजा पद्धतियाँ बहुत ही लोकप्रिय हो गईं और उनकी मज़ारें बंगाल में सर्वत्र पाई जाती हैं।

बंगाल में पंद्रहवीं शताब्दी के बाद वाले वर्षों में मंदिर बनाने का दौर ज़ोरों पर रहा, जो उन्नीसवीं शताब्दी में आकर समाप्त हो गया। हमने देखा है (अध्याय 2) कि मंदिर और अन्य धार्मिक भवन अकसर उन व्यक्तियों या समूहों द्वारा बनाए जाते थे, जो शक्तिशाली बन रहे थे। वे इनके माध्यम से अपनी शक्ति तथा भक्तिभाव का प्रदर्शन करना चाहते थे। बंगाल में साधारण ईंटों और मिट्टी-गारे से अनेक मंदिर 'निम्न' सामाजिक समूहों जैसे कालू (तेली), कंसारी (घंटा धातु के कारीगर) आदि के समर्थन से बने थे। यूरोप की व्यापारिक कंपनियों के आ जाने से नए आर्थिक अवसर पैदा हुए। इन सामाजिक समूहों से संबंधित अनेक परिवारों ने इन अवसरों का लाभ उठाया। जैसे-जैसे लोगों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति सुधरती गई, उन्होंने इन स्मारकों के निर्माण के माध्यम से अपनी प्रस्थिति या प्रतिष्ठा की घोषणा कर दी। जब स्थानीय देवी-देवता, जो पहले गाँवों में छान-छप्पर वाली झोपड़ियों

जीववाद
यह मानना कि पेड़-पौधों, जड़ वस्तुओं और प्राकृतिक घटनाओं में भी जीवात्मा है।

?

यहाँ दिए गए मंदिर की तुलना अध्याय 2 में दिए गए मंदिर से करें।

चित्र 11 (बाएँ)
एक दोचाला छप्परदार झोंपड़ी

चित्र 12 (दाएँ)
एक चौचाला मंदिर

© NCERT not to be republished

चित्र 13
गोपियों के साथ कृष्ण, श्यामपुर मंदिर से पकी मिट्टी की एक पटिया, विष्णुपुर

में पूजे जाते थे, को ब्राह्मणों द्वारा मान्यता प्रदान कर दी गई तो उनकी प्रतिमाएँ मंदिरों में स्थापित की जाने लगीं।

इन मंदिरों की शक्ल या आकृति बंगाल की छप्परदार झोपड़ियों की तरह 'दोचाला' (दो छतों वाली) या 'चौचाला' (चार छतों वाली) होती थी। इसके कारण मंदिरों की स्थापत्य कला में विशिष्ट बंगाली शैली का प्रार्दुभाव हुआ। अपेक्षाकृत अधिक जटिल चौचाला यानी चार छतों वाली, ढाँचे में चार त्रिकोणीय छतें चार दीवारों पर रखी जाती थी, जो ऊपर तिर्यक रेखा या एक बिंदु तक जाती थीं। मंदिर आमतौर पर एक वर्गाकार चबूतरे पर बनाए जाते थे। उनके भीतरी भाग में कोई सजावट नहीं होती थी, लेकिन अनेक मंदिरों की बाहरी दीवारें चित्रकारियों, सजावटी टाइलों अथवा मिट्टी की पट्टियों से सजी होती थीं। कुछ मंदिरों में विशेष रूप से पश्चिम बंगाल के बांकुरा ज़िले में विष्णुपुर के मंदिरों में ऐसी सजावटें अत्यंत उत्कृष्ट कोटि तक पहुँच चुकी थीं।

© NCERT not to be republished

मछली, भोजन के रूप में

परंपरागत भोजन संबंधी आदतें, आमतौर पर स्थानीय रूप से उपलब्ध खाद्य पदार्थों पर निर्भर करती हैं। बंगाल एक नदीय मैदान है, जहाँ मछली और धान की उपज बहुतायत से होती है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि इन दोनों वस्तुओं को गरीब बंगालियों की भोजन-सूची में भी प्रमुख स्थान प्राप्त है। मछली पकड़ना वहाँ का प्रमुख धंधा रहा है और बंगाली साहित्य में मछली का स्थान-स्थान पर उल्लेख मिलता है। इससे ज़्यादा और क्या होगा कि मंदिरों और बौद्ध विहारों की दीवारों पर जो मिट्टी की पट्टियाँ लगी हैं, उनमें भी मछलियों को साफ़ करते हुए और टोकरियों में भर कर बाज़ार ले जाते हुए दर्शाया गया है।

ब्राह्मणों को सामिष भोजन करने की अनुमति नहीं थी, लेकिन स्थानीय आहार में मछली की लोकप्रियता को देखते हुए ब्राह्मण धर्म के विशेषज्ञों ने बंगाली ब्राह्मणों के लिए इस निषेध में ढील दे दी। *बृहद्धर्म पुराण*, जो बंगाल में रचित तेरहवीं शताब्दी का संस्कृत ग्रंथ हैं, ने स्थानीय ब्राह्मणों को कुछ खास किस्मों की मछली खाने की अनुमति दे दी।

चित्र 14
घरेलू उपयोग के लिए मछली तैयार करते हुए, विशालक्ष्मी मंदिर से पकी मिट्टी का एक फलक, आरामबाग

कल्पना करें

आप एक राजपूत राजकुमार हैं। आप अपनी कहानी किस प्रकार सुनाना पसंद करेंगे।

© NCERT not to be republished

बीज शब्द

शास्त्रीय

लघुचित्र

पीर

बोली

फिर से याद करें

1. निम्नलिखित में मेल बैठाएँ:

अनंतवर्मन	केरल
जगन्नाथ	बंगाल
महोदयपुरम	उड़ीसा
लीला तिलकम	कांगड़ा
मंगलकाव्य	पुरी
लघुचित्र	केरल

2. मणिप्रवालम् क्या है? इस भाषा में लिखी पुस्तक का नाम बताएँ।
3. कत्थक के प्रमुख संरक्षक कौन थे?
4. बंगाल के मंदिरों की स्थापत्यकला के महत्त्वपूर्ण लक्षण क्या हैं?

आइए विचार करें

5. चारण-भाटों ने शूरवीरों की उपलब्धियों की उद्घोषणा क्यों की?
6. हम जनसाधारण की तुलना में शासकों के सांस्कृतिक रीति-रिवाजों के बारे में बहुत अधिक क्यों जानते हैं?
7. विजेताओं ने पुरी स्थित जगन्नाथ के मंदिर पर नियंत्रण प्राप्त करने के प्रयत्न क्यों किए?
8. बंगाल में मंदिर क्यों बनाए गए?

आइए करके देखें

9. भवनों, प्रदर्शन कलाओं, चित्रकला के विशेष संदर्भ में अपने क्षेत्र की संस्कृति के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्षणों/विशेषताओं का वर्णन करें।

© NCERT not to be republished

10. क्या आप (क) बोलने, (ख) पढ़ने, (ग) लिखने के लिए भिन्न-भिन्न भाषाओं का प्रयोग करते हैं? इनमें से किसी एक भाषा की किसी प्रमुख रचना के बारे में पता लगाएँ और चर्चा करें कि आप इसे रोचक क्यों पाते हैं?

11. उत्तरी, पश्चिमी, दक्षिणी, पूर्वी और मध्य भारत से एक-एक राज्य चुनें। इनमें से प्रत्येक के बारे में उन भोजनों की सूची बनाएँ, जो आमतौर पर सभी के द्वारा खाए जाते हैं। आप उनमें कोई अंतर या समानताएँ पाएँ, तो उन पर प्रकाश डालें।

12. इनमें से प्रत्येक क्षेत्र से पाँच-पाँच राज्यों की एक-एक अन्य सूची बनाएँ और यह बताएँ कि प्रत्येक राज्य में महिलाओं तथा पुरुषों द्वारा आमतौर पर कौन-से वस्त्र पहने जाते हैं। अपने निष्कर्षों पर चर्चा करें।

© NCERT not to be republished